श्रीगणेशायनमः ॥

श्रीरामशतकम्.

भाषाटीका सहितम् ।
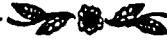
अल्मोडानिवासि

पं० मोतीराम त्रिपाठी विरचितम्

जिसको

श्रीयुत शिवलाल गणेशीलाल ने

स्वकीय "लक्ष्मीनारायण" यन्त्रालय

मुरादाबाद में मुद्रितकर

प्रकाशित किया

सं० १९५५

॥ ॐश्रीगणेशायनमः ॥

* अथ श्रीरामशतकम् *

भाषाटीका सहितम्.

॥ मङ्गलाचरणम् ॥

जगदिदंहि यदंशसमुद्भवं विजयते सततञ्च य ईश्वरः ॥ भवतुनः सभवायदयाकरो विभुरजोभगवान्भवभीहरः ॥ १ ॥ गजमुखंगिरिराज सुतात्मजं सगिरिजाशिव मारुतनन्दनम् ॥ हृदिनिधाय गुरुञ्चमयामुदा रघुपतेश्शतकं प्रविरच्यते ॥ २ ॥

दोहा।

रघुबर कपिवर सुमिर अरु कविवर तुलसीदास ॥
राम शतकटीका करौं सबकर हेतु हुलास ॥ १ ॥

अर्थ—जिसके अंशसे यह जगत उत्पन्नहै और जो सर्वोपरि विराजमानहै और जो सर्व शक्तिमान् और दयाका समुद्रहै जो संसारके भयको दूर करने वाला अज और व्यापकहै वहभगवान् हमसब लोगोंको मङ्गल देवै श्री पार्वतीजी के पुत्र गणेशजी को और पार्वती सहित शिवजीको और वायुपुत्र श्रीहनुमान् जीको और गुरूजीको स्मरण कर यह राम शतक मुझसे रचा जाता है ॥ १ ॥ २ ॥

उदधिजा कर नीरजलालिता मलसुकोमलपाद

तलद्वयम् ॥ रुचिरकौस्तुभ शोभितवक्षसम् । सम भिनौमिहिराम महम्मुदा ॥ १ ॥

अर्थ—लक्ष्मीजी अपने हस्तकमलों से प्रेम पूर्वक जिनके अतीव कोमल चरण तल युगोंको सेवती हैं और सुन्दर कौस्तुभ मणिसे जिनका वक्षःस्थल शोभितहै उन विष्णु रूप रामजीको प्रीति पूर्वक प्रणाम है ॥ १ ॥

प्रतिदिनं ननुनारद तुम्बुरू प्रमुखगायक वृन्द निषेवितम् ॥ गरुड़मारुति संश्रितपार्श्वकं समभि नौमिहि राम महम्मुदा ॥ २ ॥

अर्थ----और सदैव नारद तुम्बुरू आदि गवैयों के समूह जिन की सेवामें उपस्थित रहतेहैं और गरुड और हनुमानजी जिनके दोनों पार्श्व भागोंमें खडेहैं ऐसे श्री विष्णु रूपी रामजी को प्रीति पूर्वक प्रणाम है ॥ २ ॥

सुगदयाम्बुज शंखसुदर्शनैः समभि शोभितपाणि चतुष्टयम् । कमलनाभ महीधर शायिनं समभि नौमिहि राम महम्मुदा ॥ ३ ॥

अर्थ—शंख चक्र गदा पद्म से जिनके चारों हाथ शोभित होरहे हैं और शेषनाग के ऊपर शयन करने वाले पद्मनाभ जो श्री रामजी हैं उनको प्रीतिपूर्वक प्रणाम है ॥ ३ ॥

सुरकिरीट मणि द्युतिसंलसच्चरण पद्मतलं विधि कारणम् ॥ भृगुपदांकित कोमल वक्षसं समभि नौमिह राम महम्मुदा ॥ ४ ॥

अर्थ----प्रणाम करने में तत्पर देवताओं के मुकटों की मणियों की कान्ति से जिन के चरण कमल तल शोभित हैं और भृगु

मुनि के चरणों का चिन्ह जो अपने हृदय में प्रेम पूर्वक धारण किए हैं और ब्रह्माजी जिन के नाभि कमल से उत्पन्न हुए ऐसे श्री रामजी को प्रणाम है ॥ ४ ॥

मधुरिपुं हरि चन्दन चर्चित प्रकमनीयतनुं कमलेक्षणम् ॥ करि कपोलजमौक्तिक मालिनं समभि नौमिहि राम महम्मुदा ॥ ५ ॥

अर्थ—मधुदैत्य के संहार करने वाले और हरि चन्दन जिनके रमणीय शरीर में लिप्त है कमल पत्र के समान नेत्र वाले गज मोतियों की माला पहिने हुए ऐसे श्री रामचन्द्रजी को हम प्रीति पूर्वक प्रणाम करते हैं ॥ ५ ॥

कुमति भस्म महासुरनाशकं शिव सहाय करं सुरनायकम् ॥ परमदुर्घटनस्य विधायकम् ॥ समभि नौमिहि राम महम्मुदा ॥ ६ ॥

अर्थ---दुष्ट भस्मासुर के नाश करने वाले और महादेवजी की सहायता करने वाले अति असम्भव को सम्भव करने वाले श्री रामजी को हम प्रेम से प्रणाम करते हैं ॥ ६ ॥

सकलवेद समुद्धर मत्त्वयं तदभिसंहर जीवन संहरम् ॥ धृतमनोहर मीनशरीरकं समभि नौमिहि राम महम्मुदा ॥ ७ ॥

अर्थ—शंखासुर को मार वेदों के उद्धार करने वाले और सुन्दर मत्स्यशरीर को धारण करने वाले श्रीरामजी को हम प्रीति से प्रणाम करते हैं ॥ ७ ॥

उदधिमन्थन काल महामही धरसुशोभित सुंदर पृष्ठकम् ॥ विधृत कच्छपराज सुविग्रहं समभि नौमिहिराम महम्मुदा ॥ ८ ॥

अर्थ—समुद्र मथने के समय धारण किए मन्दराचल से जिन का पृष्ठभाग शोभित हुआ सुंदर महा कच्छप शरीर जिनो ने धारण किया ऐसे उन श्रीराम जी को प्रीतिसे हमप्रणाम करते हैं ८॥

कनकनेत्रमहासुरदुस्तरोः परिसमुत्खननोद्धृत भूव्यथम् ॥ विधृतशुभ्र किरीन्द्र महातनुं समभि नौमिहिराम महम्मुदा ॥ ९ ॥

अर्थ----हिरण्याक्ष दैत्य रूपी महा दुर्वृक्ष को समूल विदारण कर पृथिवी के दुःख को हरने वाले और श्रीश्वेत वाराह शरीर को धारण करने वाले श्रीरामजी को प्रीति पूर्वक हम प्रणाम करते हैं ॥ ९ ॥

निजसुभक्तवरं परिरक्षितुं खलुतदीय पितुश्च विमुक्तये ॥ धृतनृसिंह तनुं परमेश्वरं समभि नौमि हि राम महम्मुदा ॥ १० ॥

अर्थ----अपने सुन्दर भक्त प्रह्लादके रक्षार्थ और उसके पिता हिरण्य कशिपु को मुक्त करने के हेतु नृसिंह शरीर को धारण करने वाले श्रीरामजीको हम प्रसन्नता पूर्वक प्रणाम करते हैं॥१०॥

प्रवलदैत्य पतेर्वलिभूपते र्वितर्णोद्भव गर्व विमुक्तये ॥ धृतमनोहर वामन विग्रहं समभि नौमिहि राम महम्मुदा ॥ ११ ॥

अर्थ----वलवान दैत्यों के स्वामी राजावलि को जो दान करने से अभिमान उत्पन्न हुआ उस के दूरकरने के निमित्त [और देवराज को राज्य सुखदे ने के निमित्त] मनोहर वामन शरीर को धारण करन वाले श्रीरामजी को हम प्रीति पूर्वक प्रणाम करते हैं ॥ ११ ॥

कुमदसर्प समन्वित भूमिभृत्कुल कुवृक्ष विदा-

रण कारणात्॥ बिधृतवज्रकुठार मतिप्रभं समभि नौमिहि राम महम्मुदा ॥ १२ ॥

अर्थ---दुर्मद रूप सर्प युक्त राजाओं के कुलरूपी दुष्ट वृक्षों के विदारण करने के हेतु वज्रसमान कुठार को धारण करने वाले और बडे तेजस्वी अर्थात् परशुरामरूपी श्रीरामजी को हम प्रीति पूर्वक प्रणाम करते हैं ॥ १२॥ इस का अर्थ इंद्र और पर्वतों में भी घटता है ॥

दशमुखादि सुरारि समुद्भवा तुलविपत्परिखिन्नतरात्मनाम्॥ सुरमुनीन्द्र परं प्रमुदे नृणां समभिनौमिहिराममहम्मुदा ॥ १३ ॥

अर्थ---रावण आदि असुरों के बहुत सताये हुए, देवता मुनि और मनुष्यों को परम आनन्द देनेवाले श्रीरामजी को हम प्रेम पूर्वक प्रणाम करते हैं ॥ १३ ॥

अयिसुराः कपिरूपधराद्रुतं भवत गच्छत शैल वरेष्वपि ॥ अवतरामि भुवीत्यवदच्चयस्तमभि नौमिहिराममहंमुदा ॥ १४ ॥

अर्थ---(स्तुति करने के पीछे हाथ जोड खडे हुए) देवताओं को जिनरामजी ने अहो देव लोगो अब तुम वानरों का रूप धारण कर पर्वतों में जावसो और मैं भी पृथिवीमें अवतार लेताहूं ऐसा कहकर विदा किया उन श्रीरामजी को हम प्रीति पूर्वक प्रणाम करते हैं ॥ १४ ॥

अमर भक्त मुनींद्र महाविपद्वसुमती गुरुभार निवृत्तये ॥ भुविगतं सहबै निज मायया रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ १५ ॥

अर्थ----देवता तथा अपने भक्त जन और मुनीश्वरों की घोर विपात्ति के और पृथिवी के असह्य भारके दूर करने के निमित्त अपनी माया सहित पृथिवी में अवतार ले विराजमान हुए श्री रामचन्द्रजी को हम शिर से प्रणाम करते है ॥ १९ ॥

दशरथा वनिप्राङ्गण जानुगं रुचिर पीतपटं जन मोदकम् ॥ विकसिता सित वारिज नीलकोमल तनुं प्रणमामि रघूत्तमम् ॥ १६ ॥

अर्थ----महाराज दशरथजी के आंगन में घुटनों के वलसे चलने वाले और सुन्दर पीली झंगुलिया पहिने नवीन नीलकमल के समान कोमल छवीले वदन वाले अति वालरूप श्री रामजी को प्रणाम है ॥ १६ ॥

स्वजननी नयनद्वय हर्षकं परम योगि सुसिद्धिद कज्जलम् ॥ मधुर भाषण लोक मनो हरं रघुपतिं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ १७ ॥

अर्थ----अपनी माताजीके नेत्रों को आनन्द दायक और परम योगियों के लिये सिद्धाञ्जन के समान अपने मधुर भाषण अर्थात् तोतली वोली से सव लोगों के मन को हरने वाले श्री रामजी को हम शिर से प्रणाम करते हैं ॥ १७ ॥

विविध सुन्दर केलि कलापटुं सुमतिभिः सखभिः परिवेष्टितम् ॥ अनुजवर्गयुतं करुणाकरं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ १८ ॥

अर्थ----लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न नामक भ्राताओं से और सुबुद्धिवाले सखाओं करके सहित नाना प्रकारकी सुन्दर वाललीला करने में चतुर श्रीरामजी को हम शिरसे प्रणाम करते हैं ॥१८॥

सरसिजोदरपादतलंमनो हरनखं वरजानु सु-

शोभितम् ॥ हरि कटिं हरमानस हंसकं रघुपतिं शिरसाप्रणमाम्यहम् ॥ १९ ॥

अर्थ----कमल के उदर के समान कोमल और मनोहर चरण तल और उज्ज्वल नख वाले सुन्दर जानुओं करके शोभित और सिंह के समान रमणीय कटि (कमर) से शोभित और शिवजी के हृदयरूप मानसरोवर निवासी हंस ऐसे श्रीरामजी को हम शिरसे प्रणाम करते हैं ॥ १९ ॥

करि करायत वाहु विराजित जनमनोहर मांसल वक्षसम् ॥ ललित कम्बुगलं सुवृषांषकं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ २० ॥

अर्थ----गज राज की सूंडके समान लम्बी भुजाओं से विराजमान अति सुन्दर पुष्ट विशाल वक्षःस्थल से शोभित और सुन्दर शंख के समान रेखा युक्त मनोहर कण्ठ स विभूषित तरुण वृषभ के समान स्कन्ध धारी श्रीरामजी को हम शिर से प्रणाम करते हैं २०

शशिमुखं तिल पुष्प सुनासिकं नव रसाल दलाधर शोभितम् ॥ परिलसत्कुसुमोपम दन्तकं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ २१ ॥

अर्थ----जिनका चन्द्रमा के समान आनन्द दायक मुखहै और तिल पुष्प के समान मनोहर नासिका है और आम के नए पत्तो के समान लाल२ होटोंके भीतर पुष्प पंक्ति के समान झलकती दन्त पंक्ति करके शोभित श्री रामजी को शिर से प्रणाम है॥२१॥

सुभगदीर्घ धनुर्विलसद्भ्रुवं कमललोचन स्वच्छ ललाटकम् ॥ कनककुण्डल भूषितसश्रुतिं रघुपतिं शिरसाप्रणमाम्यहम् ॥ २२ ॥

अर्थ---जिनकी भौंहैं सुंदर दीर्घधनुषके सदृश और आंखैं कमल के समान विराजती हैं ललाटपट्ट जिनका झलकता है जिनके कर्ण सुवर्ण कुण्डलों करके भूषित हैं ऐसे श्रीरामजी को हम शिरसे प्रणाम करते हैं २२ ॥

रुचिरवायसपक्षविराजितं मुकुटमण्डित सुंदर मस्तकम् ॥ स्मिततिरस्कृत चन्द्रकरद्युतिं रघुपतिं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ २३ ॥

अर्थ—जिनके सुन्दर काक पक्षयुक्त शिरपर रत्नजटित मुकुट विराजताहै ॥ और जिनकी मुस्कुराहटसे चन्द्रमाके किरणों की कांति फीकी लगती है ऐसे श्रीरामजी को हम शिरसे प्रणाम करतेहैं ॥ २३ ॥

वनमुनीन्द्र विपत्प्रदताटका तिमिरसंतति संहृतिभास्करम् ॥ मुनिमखारि निशाटनवैरिणं रघुबरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ २४ ॥

अर्थ---वनमें मुनिजनोंको विपत्ति देने वाली ताड़का रूपी अन्धकार पंक्तिके संहार करनेको सूर्य और विश्वामित्रजी के यज्ञमें विघ्नकारी राक्षस रूपी उलूकों के वैरी ऐसे श्री रामजी को हम शिरसे प्रणाम करतेहैं ॥ २४ ॥

मुनिबधू गुरुशापनिवारकं परमपावनपाद सरोरुहम् ॥ अभयदं शरणागतवत्सलं रघुबरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ २५ ॥

अर्थ—गौतम मुनिजीके शापसे शिला भावको प्राप्त अहल्या जीका उद्धार करने वाले और अति पवित्र जिनके चरण कमल हैं अभयके देने वाले शरणमें आएके ऊपर प्रेम करने वालेऐसे श्रीराम जीको हम शिरसे प्रणाम करतेहैं ॥ २५ ॥

शिवधनुर्गुरुता नृपमानिताऽवनिसुता परिसंशय संहरम् ॥ जनकराज मनोरथपूरकं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ २६ ॥

अर्थ----शिवजीके धनुषकी गुरुता (भारीपन) राजाओं के अभिमान और जानकीजी के संशय को हरने वाले और महा राजा जनकजी के मनोभिलाष को पूर्ण करने वाले श्रीरामजीको हम शिरसे प्रणाम करतेहैं ॥ २६ ॥

समभिफुल्लितं मानस पंकजा वनिसुतार्पित सुन्दर मालया ॥ परि सुशोभित कण्ठसुवक्षसं रघु वरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ २७ ॥

अर्थ----धनुर्भङ्ग देखने से हृदय कमलजिनका प्रफुल्लित होगया ऐसी सीताजीकरके प्रेम पूर्वक पहिनाई जयमालासे जिनका सुंदर कण्ठ और वक्षःस्थल शोभित हुआ ऐसे श्रीरामजी को हम शिरसे प्रणाम करते हैं ॥ २७ ॥

सुमिथिलानगरी सुखवासिभिः स्वनयनांबुरुहै र्विहितार्चनम् ॥ त्रिभुवनैक मनोहरदर्शनं रघुवरं शिरसाप्रणमाम्य हम् ॥ २८ ॥

अर्थ---सुख पूर्वक जनकपुरी में रहने वाले जनोंसे नेत्रकमलों से पूजे गए अर्थात् बडेही उत्साह से देखे गए और तीनों लोकों के वीच जो दर्शनीय उनके शिरो भूषण ऐसे जो श्रीरामजी उन को हम शिरसे प्रणाम करते हैं ॥ २८ ॥

सकलपौरजनाः स्वगृहोदरे ष्वपियमेववहिश्च समन्ततः ॥ ददृशुरद्भुतसुंदर दर्शनं रघुवरं शिरसा प्रणाम्यहम् ॥ २९ ॥

अर्थ—सारे नगर के लोग अपने घरों के भीतर बाहिर और चारों ओर जिनको देखने लगे ऐसे परम मनोहर मूर्ति श्रीरामजी को हम शिरसे प्रणाम करते हैं ॥ २९ ॥

अखिलनागर लोकमनांसिवै भ्रमरवन्नव नील सरोरुहे ॥ वरपरागपटे परिरेभिरे रघुवरं शिरसा प्रणमामितम् ॥ ३० ॥

अर्थ—सुन्दर केसरिया वागा पहिने श्यामल मूर्ति जिन रामचंद्रजी के विषय समस्त नगर निवासियोंके मन नवीन खिले नीलकमल में भ्रमरों के समान वसगए ऐसे उन श्रीरामजी को हम शिरसे प्रणाम करते हैं ॥ ३० ॥

सजलमम्बुदमेत्य ताडिद्यथा जनकजापतिमेत्य शुशोभयम् ॥ यमवलोक्यजनाइव वर्हिणो मुमुदिरे ऽभिनमामितमीश्वरम् ॥ ३१ ॥

अर्थ—जलसे परिपूर्ण मेघको पाय जैसे बिजली शोभापाती है ऐसेही मेघवर्ण श्री रामचन्द्रजी को सुन्दर पति पाय सीताजी विद्युल्लता के समान शोभित हुई और विद्युल्लता युक्त मेघ के समान सीता सहित विराजमान् जिन रामजीको देख लोक मयूरों के समान आनन्दित हुए ऐसे उन रामजीको शिरसे प्रणाम है ॥ ३१ ॥

परशुभृद्घनदर्पविमर्दकं झटिति दुःखहरं शरण प्रदम् ॥ जनमनोरथ पद्मदिवाकरं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ३२ ॥

परशुरामजीके प्रचण्डगर्व को छुडानेवाले दुःखित के दुःखको शीघ्र हरनेवाले और शरण देनेवाले भक्तजनों के मनोरथ रूप कमलों के खिलानेवाले श्रीरामजीको शिरसे प्रणाम है ॥ ३२ ॥

जनकजामुख चन्द्रचकोरकं गुणविदां तिलकं

त्रिजगत्प्रभुम् ॥ अमित नित्यसुखप्रद मद्वयं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ३३ ॥

अर्थ—सीताजीके मुख चंद्रमाके चकोर और गुणों के माथे के तिलक । तीनलोकों के महाराजाधिराज और अनन्त नित्य रहनेवाले सुख के देनेवाले और केवल परब्रह्म ऐसे श्रीरामचन्द्र जीको हम शिर से प्रणाम करते हैं ॥ ३३ ॥

नयनिधिं बलबुद्धि महोदधिं सकलसद्गुणरत्न सुशोभितम् ॥ विधिहराद्यमरेष्टफलप्रदं रघुबरं शिरसाप्रणमाम्यहम् ॥ ३४ ॥

अर्थ—नीति के निधान बल और बुद्धिके महासागर और सम्पूर्ण सद्गुण रूपरत्नों से सुशोभित ब्रह्मा शिव आदि देवताओं को यथेच्छ फल देनेवाले श्रीरामजीको शिरसे प्रणाम है ॥ ३४ ॥

अनुपमैः स्वगुणै रभिनन्दिताखिलजनं समदृष्टि महानिशम् ॥ निज सुभक्त हृदाम्बुज बासिनं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ३५ ॥

अर्थ—अपने अनुपम गुणों से सब जनों को प्रसन्न करने वाले और सदैव समदर्शक और अपने सुन्दर भक्तों के हृदय कमल में बसने वाले ऐसे श्री रामजी को हम शिरसे प्रणाम करतेहैं॥३५॥

नरपतेः स्वपितु समनुज्ञया ऽनुजविदेह सुता सहितं वने ॥ गत मचिन्त्य महीन पराक्रमं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ३६ ॥

अर्थ—अपने पिता महाराजा दशरथजी की आज्ञासे सीता और लक्ष्मण सहित दण्डक वन को गए और जिनकी महिमा का चिन्तवन नहीं कियाजाता है और अतुल पराक्रम वाले ऐसे श्री रामजी को शिर से प्रणाम है ॥ ३६ ॥

कृत कृतार्थ मुनिं सुमुनिव्रतं कलितरम्यजटा मुकुटं विभुम् ॥ इषुधिचापधरं करुणाकरं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ३७ ॥

अर्थ—वनमें जाकर मुनियों को दर्शन दे कृतार्थ करने वाले और मुनिव्रत धारण किए जटा मुकुट से शोभित हुए धनुर्वाण हाथ में लिए ऐसे परम दयालु श्री रामजी को शिरसे प्रणामहै॥ ३७

हतविराध मुखासुर माशुगै रचित पञ्चवटी कुटि मव्ययम् ॥ खर रिपुं प्रखरास्त्र मिनप्रभं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ३८ ॥

अर्थ—अपने वाणों से विराध आदि असरों का संहार करने वाले और पञ्चवटी मे सुन्दर कुटी जिन्होंने बनाई और खरारि और तीक्षण जिन के अस्त्र हैं और सूर्य के समान प्रतापी श्री रामजी को हम शिरसे प्रणाम करते हैं ॥ ३८ ॥

कपटहेममृगासुर मुक्तिदं भ्रमणपूततरीकृत काननम् ॥ अवनिजा वचनामृतचातकं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ३९ ॥

अर्थ—आसुरीमाया करके सुवर्ण मृग बनेहुए मारीचको मुक्ति देनेवाले और भ्रमण [फिरना] करने से बनको जिनके चरणों ने अतिपवित्र करदिया और रावण जिस [छायारूप] सीता को हरले गया उस सीताके वचनरूप अमृतके लिय चातक अर्थात् सीताजीको पुकार के उनके उत्तर के आकांक्षी उन श्रीराम जीको हम शिरसे प्रणाम करते हैं ॥ ३९ ॥

युधिदशास्य हतायजटायुषे सपदियःपददौपरमं पदम् । अपिकबंध विमोक्ष पदप्रदं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ४० ॥

अर्थ—[जब रावण सीताजीको लियेजाताथा तो उस समय जटायुने रावणके साथ घोर संग्राम किया] युद्धमें रावणके मारे हुए जटायुको शीघ्र जिन्होंने उत्तमपददिया और कबंध को मुक्ति देनेवाले उन रामजीको हम शिरसे प्रणाम करते हैं ॥ ४० ॥

शबरिका बदरीफल भक्षकं जनमनोगत भाव विदंसदा ॥ समभिपावनदृष्टिमतीव हि रघुबरंशिर सा प्रणमाम्यहम् ॥ ४१ ॥

अर्थ—शबरीके चखेहुए बेरीके फलोंको प्रीति पूर्वक खाने वाले और भक्तजनोंके मनके अभिप्राय को जाननेवाले और अति पवित्र करने वाली जिनकी दृष्टि है ऐसे उन रामजीको हम शिरसे प्रणाम करते हैं ॥ ४१ ॥ (इसके अनन्तर पम्पासरोवर के तीर पर आये सुग्रीव के भेजे) ।

पवनजामलमांसल सुन्दरां सपरिराजित पूत तराङ्कम् ॥ अनुजमौक्तिकं युक्तमहंभजेरघुबरामल नीलमहामणिम् ॥ ४२ ॥

अर्थ—श्री हनूमानजी के पवित्र और पुष्ट सुन्दर कन्धे पर जिनका अति पवित्र शरीर शोभित होरहाहै और भाई लक्ष्मण रूपी मोतीसे युक्त ऐसे रामचन्द्र रूपी महा नील मणिको हम भजते हैं ॥ ४२ ॥

रुचिरकण्ठसुराज्य बधूवियोगजविपद्धर चाप शिलीमुखम् ॥ कपिसखंखलदर्प विनाशकं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ४३ ॥

अर्थ—सुग्रीवके राज्य और स्त्रीके वियोगसे उत्पन्न विपत्ति के दूर करने वाले जिनका धनुष बाणहै और सुग्रीवकोमित्र (वा-लिसदृश) जोकोई अविवेकी उसके दर्पको दलन करने वाले ऐसे श्रीरामजीको शिरसे प्रणामहै ॥ ४३ ॥

सुखितमात्म सखस्य सुखेनवै शरणदायकमौलि महामणिम् ॥ कृतगिरीन्द्र गुहावसतिंप्रभुं रघुपतिं शिरसाप्रणमाम्यहम् ॥ ४४ ॥

अर्थ—अपने मित्र सुग्रीव के (स्त्री राज्य प्राप्तिसे जनित सुखसे सुखी शरणके देनेवाले पुरुषोंके मुकुटकेमणिहुए ऋष्यमूक पर्वतकी गुफामें विराजेहुए श्रीरामजीको हम शिरसेप्रणामकरतेहैं ४

समभिलङ्घ्य सलीलमपांपतिं पवनजोहियर्द यमनोरमाम् । कुशलिनीमवलोक्यसमाययौरघुपतिं शिरसा प्रणमामितम् ॥ ४५ ॥

अर्थ—सुग्रीवके भेजे पवनपुत्र सहजहीमें समुद्रको लांघकर जिनकी मनोरमा अर्थात् प्राणप्रिया सीताजीको लङ्कापति रावण की अशोकवाटिका में कुशलिनी देख (मुद्रिकादे) और उनसे चूडामणिले) जिनके निकट आये उन रामजी को हम शिरसे प्रणाम करते हैं ॥ ४५ ॥

श्रवणतो वनिजाकुशलस्यहि दशमुखस्य पुरी दहनस्यच परितुतोष कपिन्द्रमुदेपिऽयो रघुपतिं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ४६ ॥

अर्थ—सदा आनन्द मय जोरामजी सीताकी कुशल और लङ्काका दहन सुन कपिराजकी हर्षताके लिए अति प्रसन्न हुए उन रामजीको शिरसे प्रणामहै ॥ ४६ ॥

गुणनिधिं पवनप्रियनंदनं हृदिववन्धसुबाहुयुगेनयः । पुनरुवाचकपे व्रजशंयुत स्तमभिनौमिहि राम महम्मुदा ॥ ४७ ॥

अर्थ—सद्गुणोंके समुद्र पवनके प्यारे पुत्र हनूमानजी कोजो

रामचन्द्र अपनी भुजाओं करके बांधते हुये और फिर बोलेकि हे कपि कल्यानं संयुक्त तुम यात्रा करो ऐसा कहने वाले श्री रामचन्द्रजी को हम शिरसे प्रणाम करतेहैं ॥ ४७ ॥

कपिनिषेवित मम्बुनिधेस्तटे कृतमहेश्वर मन्दिर संस्थितिम् । अखिललोक महेश्वर मन्वहं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ४८ ॥

अर्थ—वानरों करके सेवित किए गए और समुद्र के तीरपर मान्दिरवना रामेश्वरनाम शिवजीके स्थापन करने वाले और समस्तभुवनोंके महेश्वरऐसे श्रीरामजीकोहम शिरसे प्रणामकरतेहैं ॥४८॥

उपरिवारिनिधेः परिकारिता नुपमसेतु मजंभव सिन्धुतः झटितितारकपादसरोरुहं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ४९ ॥

अर्थ—तब समुद्रके ऊपर नलनीलआदि वानरों करके अनौखा पुल जिन्होंने बंधवाया भव सागरसे शीघ्र तारनेवाले जिनके चरण कमलहैं ऐसे उन राम चन्द्रजीको हम शिरसेप्रणाम करतेहैं ४९

जलनिधेःपरतीरमुपागतं परमभक्तविभीषणसेवितम् ॥ स्वशरणागतपालन तत्परं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ५० ॥

अर्थ—समुद्रके परलेतीरमें पहुंचे और विभीषण करके सेवित किए और अपने शरणमें आयेकी रक्षा करने वाले श्रीरामजी को शिरसे प्रणामहै ॥ ५० ॥

विदितदूतमुखारि मनोरथं नयविचारपरायण मानसम् ॥ रणमहाङ्गण वीरशिरोमणिं रघुपतिं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ५१ ॥

अर्थ—दूतके मुखसे शत्रुका मनोरथ जिन्होंने जानलिया नीति शास्त्रके विचारमें तत्पर सङ्ग्राम भूमिमें वीरोंके शिरोमणि ऐसे उन रामजीको हम शिरसे प्रणाम करतेहैं ॥ ५१ ॥

अनुजयाहिरणे रणकोविद कपिनिशाचर वीर समाकुले ॥ इतियआदिशतिस्माहि लक्ष्मणं रघुबरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ५२ ॥

अर्थ—हे संग्राममें कुशल लक्ष्मण वानर और राक्षसों करके परिपूर्ण रणमें जाओ इस प्रकार आज्ञा करने वाले राम जीको हम शिरसे प्रणाम करतेहैं ॥ ५२ ॥

यदनुज रिपुशक्तिसुमूर्च्छितं द्रुतमजीवय दद्रिसमुद्धरः। पवनजः पवमानगतिर्बली रघुपतिं शिरसा प्रणमामितम् ॥ ५३ ॥

अर्थ—पवनके समान गमनशाली पवन पुत्र अतीव बलके निधान श्री हनूमानजी संग्राममें शत्रुकी शक्तिसे मूर्च्छाको प्राप्त जिनके भाई लक्ष्मणको द्रोणाचल ला शीघ्र चैतन्य किया उन रामचन्द्रजीको शिरसे प्रणाम करतेहैं ॥ ५३ ॥

प्रियवरोनुजतोपिममासिवै पवननन्दनलक्ष्मण जीवदा। इति य आह तदास्म कपीश्वरं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ५४ ॥

अर्थ—भो हनूमान् लड़ाई के समय गए लक्ष्मण को जीवदान देनवाले तुम मुझको भाई से भी प्रिय लगते हो ऐसे मधुर योग्य बोलनेवाले रामजीको शिरसे प्रणाम है ॥ ५४ ॥

हृदिनिधाय यमाशु हि लक्ष्मणो युधिरिपुं घन नादमजीजयत् ॥ निजवलश्च सुरन्द्र महर्षयद्रघुपतिं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ५५ ॥

अर्थ—लक्ष्मणजीने जिन रामचन्द्रजी का हृदयमें ध्यान करके संग्राम में घननाद अर्थात् मेघनाद को जीता और अपनी सेना और इन्द्रको प्रसन्न किया उन रामचन्द्रजी को हम शिरसे प्रणाम करते हैं ॥ ५५ ॥

अशनिसारशरायुधियस्यभूधरसमानतनुंकलश-श्रुतिम् ॥ समदिशत्रुभटं समपात यद्रघुवरं शिर-सा प्रणमाम्यहम् ॥ ५६ ॥

अर्थ—जिन रामचन्द्रजी के वज्रके समान वाणों ने युद्ध के बीच पर्वत के समान कठोर शरीर धारी महा दुर्जय शत्रु कुम्भ-कर्ण को शीघ्र गिराया उन रामचन्द्रजी को हम शिरसे प्रणाम करते है ॥ ५६ ॥

कृतरणाध्वरविंशतिवाहुभृत्पशुवलिं पृथिवीभरसं हरम् ॥ तदनुजार्पितराज्यमहाश्रियं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ५७ ॥

अर्थ—युद्धरूपी महायज्ञ के अन्त में रावणरूप पशुकी वलि करने वाले और पृथिवीके भारको हरने वाले और जिन्होंने उस रावण के भ्राता विभीषण को लङ्काकी राज्यश्री दी उन श्री रामचन्द्रजी को शिरसे प्रणाम करते हैं ॥ ५७ ॥

विबुधवृन्दकरच्युतभूरिशः कुसुमवृष्टिसुशोभित मस्तकम् ॥ अभिविराजितमाशु जयश्रिया रघु-पतिं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ५८ ॥

अर्थ—विजय लक्ष्मीप्राप्त होतेही आकाशसे देवगणों करकै की हुई पुष्पवृष्टि से जिन का मस्तक सुशोभित हुआ ऐसे श्री रामजी को शिरसे प्रणाम है ॥ ५८ ॥

अनलतो वहिरागतयाक्षमा तनुजया नघयाभि

निषेवितम् ॥ प्रमुदितामरवृन्दकृतस्तुतिं रघुवरं शिरसाप्रणमाम्यहम् ॥ ५९ ॥

अर्थ—प्रज्वालित अग्नि में प्रवेश कर फिर बाहरआ यह सतीत्व का चमत्कार जिन्होंने देवतावानर और रामलक्ष्मण राक्षसादियों को प्रत्यक्ष दिखाया ऐसी परमपावन सीताजी करके सेवित और प्रसन्न हुए देवगणों से स्तुति कियेगये श्रीरामजी को हम शिरसे प्रणाम करते हैं ॥ ५९ ॥

दशरथाय कृतप्रणतिंसुधासमभिवृष्टिसमुत्थितसैनिकम् । ऋतगिरं द्विजराजमुखंसदा रघुवरं शिरसाप्रणमाम्यहम् ॥ ६० ॥

अर्थ—स्वर्गसे आये पितादशरथजीको जिन्होंने प्रणामकिया इंद्रजी के अमृतवरसाने से मूर्छित सेनाके लोग जिनके उठखडे हुए सत्य प्रतिज्ञाकारी सदा प्रसन्न मुख अर्थात् निर्विकारी श्रीरामजी को हम शिरसे प्रणाम करते हैं ॥ ६० ॥

मुदित भूमिसुतासहितं विभीषण कपीन्द्र युतं ज्यसलक्ष्मणम् । समुपाविष्ट मनूपमपुष्पके रघुवरं शिरसाप्रणमाम्यहम् ॥ ६१ ॥

अर्थ—कार्य सिद्धि होने और विरह के दुःख के दूर होनेसे प्रसन्न सीताजी सहित विभीषण से सेवित और भ्राता लक्ष्मण सहित अतीव मनोहर पुष्पक विमान में बैठ विराजित श्रीरामजी को हम शिरसे प्रणाम करते हैं ॥ ६१ ॥

इदमिदंभुविपश्यमहीसुते पथिषुतां कथयन्मधुरं वचः । इतिय आशुजगाम सुखेनहि रघुबरं शिरसाप्रणमामितम् ॥ ६२ ॥

अर्थ—हे प्रिय ! जानकी यह देखो इस स्थान में अमुकने अमुक कार्य किया और यह जन स्थान है ये ऋषियोंके आश्रम हैं इत्यादि मार्ग में सीताजी को अवलोकन करा २ प्रिय वचनों से प्रसन्न करते २ जो रामजी शीघ्र सुखसे अयोध्याजी की ओर आते विराज उन रामजी को हम शिरसे प्रणाम करते हैं॥६२॥

मुनिवराश्रमतो भरतम्प्रति समभिगम्य ममागमनंवद। इतिय आदिशतिस्ममरूत्सुतं रघुवरं शिरसाप्रणमाम्यहम् ॥ ६३ ॥

अर्थ—जिन रामजीने भरद्वाजाश्रम से हनूमानजीको कहा तुम जाकर भरत से मेरे आनेका समाचार कहो उन रामजीको हमशिरसप्रणामकरतेहैं॥६३॥ भरतजीके पासजाहनूमानजीने सीताहरण सुग्रीवमत्री लंकाविजय सीतासतीत्वदर्शन विभीषणराज्यतिलक देवतासंगम पिता दशरथ संम्भाषण पश्चात् पुष्पक विमानमें बठ भरद्वाजाश्रम में कुशल पूर्वक आना इत्यादि सब वृत्तान्त कह भरतजीको प्रसन्नकर फिर शीघ्र रामचरणों में प्रणामकर भरत प्रीति भक्ति नियम निवेदन किया॥

तदनुयः स्वयमेवहिकेकयी तनयमेत्य मुदापरिषस्वजे ॥ गुरूजनानभिवन्द्यपुरींययौ रघुवरंशिरसा प्रणमामितम् ॥ ६४॥

अर्थ—इसके पीछे जो रामजी आपही जा भरतजी को बड़े प्रेम से मिले और गुरुजन अर्थात् वशिष्ठादियों को प्रणामकर अयोध्यापुरीको चले उन श्रीरामजीको हम शिरसे प्रणाम करते हैं ६४।

विरह विग्रह खिन्नतरप्रसू प्रकृतिधान्य विशेष वरावलीः॥ अकुरुतागमवर्षणहर्षिता रघुपतिं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ६५ ॥

अर्थ—वियोगरूप अवर्षण से म्लान हुई माता और प्रज रूप धान्यपंक्तियों को अपने स्वागतरूप बर्षासे जिन रामजीने प्रसन्न किया उन रामजीको हम शिरसे प्रणाम करते हैं॥ ६५।

रुचिररत्नमये विमलासने समुपविष्टमजंसहसी तया॥ मुनिवरेणकृताश्वभिषेचनं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम्॥ ६६॥

अर्थ—स्वच्छ और अतिमनोहर रत्नसिंहासन में सीताजी सहित विराजते और शीघ्र वसिष्ठमुनिजीने राज्याभिषेक जिनका किया ऐसे जो जन्मादि रहित श्रीरामजी उनको शिरसे प्रणाम करते हैं॥ ६६॥

सितमनोहरचामर वीजितं शशिशितातपवारण शोभितम्॥ मणिहिरण्य विभूषण भूषितं रघुवरं शिरसाप्रणमाम्यहम्॥ ६७॥

अर्थ—सुन्दर श्वेतचवर जिनके पार्श्वभागों में डुलारहे हैं और चंद्रमाके समान श्वेतछत्र से सुशोभित और मणि सुवर्णमय तथा मुक्ताहारादि विभूषणों से भूषित ऐसे श्रीरामजीको शिरसे प्रणाम करते हैं॥ ६७॥

जनकराजसुतातडिदन्वितं सुजन चातककाम फलप्रदम्॥ सकलदुःख निदाघहरंभजे रघुवराम्बुद राजमहम्मुदा॥ ६८॥

अर्थ—सुवर्णवर्ण सीतारूपी विजुलीसे युक्त सज्जनरूपी चातकों के मनोरथ के पूर्ण करनेवाले और समस्त दुःखरूपी आतप के हरनेवाले श्रीरामचन्द्र रूपी मेघराज को प्रीति पूर्वक हम भजते हैं॥ ६८॥

मुनिमरालगणैर्बुधसारसैः गुणमौक्तिकराशि

भिरप्यभि । परिविराजित मद्भुतदर्शनं समभिनौमिहि राघवमानसम् ॥ ६९ ॥

अर्थ—चारोंओर से मुनिरूपी हंसों के झुंडों से और विद्वानरूपी सारसों से सुशोभित और सद्गुणरूपी मोतियोंकी राशिसे सुशोभित श्रीरामचन्द्ररूप मानसरोवर को प्रणाम है ॥ ६९ ॥

अमितदानसुतोषितयाचकं विविधयागसुतर्पित निर्जरम् । अतिथिभूसुरकल्पमहीरुहं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ७० ॥

अर्थ—जिन रामजीने अनन्त दानदेके याचक लोग प्रसन्न किये और अनेक यज्ञोंके करनेसे देवता तृप्तकिये ऐसे श्रीरामजी को शिरसे प्रणाम है ॥ ७० ॥

नयसुरञ्जित लोकमघान्तकं हरसखं शरणागत वत्सलम् परमपावन कीर्त्तन दर्शनं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ७१ ॥

अर्थ-नीतिपूर्वक अर्थात् न्यायपूर्वक राजकार्यके करनसे जिन्होंने सारी प्रजाको प्रसन्न किया और पापनाशन शिव प्रिय और शरणागतों को प्रिय माननेवाले ॥ अतिपवित्रकारक जिनकाकीर्त्तन और दर्शन है ऐसे रामजीको शिर से प्रणाम है ॥ ७१ ॥

विहित वानरसत्कृति मुर्वरी तनुजया पिचराज्यमहाश्रिया । अभियुतं प्रकृति प्रियकारकं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ७२ ॥

अर्थ—वानरोंका सत्कार जिन्होंने किया और सीताजी और राजलक्ष्मी करके युक्त और प्रजागण के परमहितैषी श्रीरामजी को हम शिरसे प्रणाम करते हैं ॥ ७२ ॥

विधृतदौर्हृदलक्षणजानकीसुरुचिपूरकमागमको विदम् । विहित लौकिकरीति सुसंस्थितिं रघुपतिं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ७३ ॥

अर्थ----गर्भलक्षण जिनने धारणकिया ऐसी सीताजीके मनकी इच्छा पूर्ण करनवाले समस्त शास्त्रोंमें निपुण लोकमर्यादाकी स्थिति करनेवाले रामजीको शिरसे प्रणाम है ॥७३॥ (गर्भवती सीताजी से जब रामजीने पूछा तुम्हारी इच्छाकिसबातकी है तो उन्होंने कहा मुनि बनमें जानेकी तब रामजीने लक्ष्मणजीके साथ वाल्मी कि के आश्रम में पहुंचाया शास्त्र में लिखाहै कि गर्भवती स्त्रीकी इच्छा पूछ पति पूर्ण करै)

मुनिवराश्रमजात सुतद्वयं तुरगरोधनकारणतो युधि । विदिततद्बलधैर्यमहामतिं रघुपतिं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ७४ ॥

अर्थ—जिन रामजीके वाल्मीकि मुनिजीके आश्रममें लवकुश नामक दोपुत्र हुए और जिनके बालकोंकी बुद्धिबल और धीरता रामजीकेही अश्वमेधके घोडेके रोकनेसे संग्राममें देखी गयी उन को हम शिरसे प्रणाम करतेहैं ॥ ७४ ॥(अर्थात् क्षण भरमेंसारी सेना समेत सबको परास्तकर घोडेको सीताजीके आगे बांधउन बालकोंने कहाकि सबको मार हनूमानजी विभीषणको बांधलाये तब सीताजीने कहा पुत्र धन्यहो तुमने बड़ाही उत्तम कामकिया जो सब माताओंको बिधवा किया और कुलबध किया और महोप कारियोंका महा अपमान किया इनको खोलो तब फिर बालकोंने कहाकि भोमाता हमको यह विदित नथा और घोडेके पट्टके अवलोकनानुसार हमने कार्य किया सो हमारा क्यादोषहै तब सीताजीने कहा यदिमैंहूं पतिव्रतातो सब उठ खडेहों तब

सबके सब पूर्ववत् स्थित होगए यहसब रामजीका भक्तोंके गर्व को दूर करनेका कारणथा फिर घोड़ाले अश्वमेध किया ॥

जनकराजसुता यदनुज्ञया निजसतीत्वमदर्शय दद्भुतम् ॥ जनमनोभ्रमपाय निवारकं रघुवरं शिरसाप्रणमामितम् ॥ ७५ ॥

अर्थ—जिन रामचन्द्रजीकी आज्ञानुसार जानकीजीने अपने अति अद्भुत पतिव्रता धर्मको दिखाया (अर्थात् कहाकि हेपृथ्वि मनसा वाचा कर्मणा यदिमैं केवल रामजीकेही चरणोंका ध्यान करतीहूं अन्य पुरुषका स्वप्नमेंभी स्पर्श नहीं करतीहूं तोतू अपने में मुझे बासदे तोउसी क्षण पृथिवीने वैसाही किया) ऐसे रामजीको और फिर कैसेहैंकि लोकोंके मनके भ्रम और पापोंके दूर करने वाले ऐसे रामजीको शिरसे प्रणामहै ॥ ७५ ॥

निजसुता वनुजात्म भवानपि समभिषिच्यमही परिपालने ॥ समकरोच्च कपिस्मृति माशुयो रघुवरं शिरसा प्रणमामितम् ॥ ७६ ॥

अर्थ—और फिर जिन रामजीने अपने और भाइयोंके पुत्रों को पृथिवीका राज्य सौंप शीघ्र वानरोंकी सुधिली स्मरणकिया उन रामजीको शिरसे प्रणामहै ॥ ७६ ॥

भुविचिरन्ममनामजपन्सुखं वसमरुत्सुतमांसमुपेष्यसि ॥ इतियआदिशतिस्मकपीश्वरं रघुवरं शिरसाप्रणमामितम् ॥ ७७ ॥

अर्थ—वानरों के उपस्थित होनेपर जिन रामजीने हनूमानजीको प्रेम पूर्वक यह कहा कि हे वायुनन्दन ! चिरकाल तुम मेरा नाम जपते हुए सुखपूर्वक पृथ्वी में बसो और फिर मुझही में मिलजाओ ऐसे उन रामजीको शिरसे प्रणाम है ॥ ७७ ॥

तदनुवाष्पसुपूरित लोचनः पवनजः प्रणिपत्यस गद्गदम्। वरमितिस्मसमाह यमीश्वरं रघुवरं शिरसा प्रणमामितम् ॥ ७८ ॥

अर्थ—तब आंशुओं से जिनकी आंख भरगई ऐसे हनूमान् जीने जिन रामजीको प्रणामकर गद्गद स्वर से बहुत अच्छा महाराजकरके कहा उन चतुर्दश ब्रह्माण्डैक चक्रवर्त्ती रामजीको शिरसे प्रणाम है ॥ ७८ ॥

अथ कथं कथमप्यनिलात्मजो हृदिनिधाय यमेवदयाकरम्। हिमगिरिं तपसेह समाययौ रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ७९ ॥

अर्थ—तब फिर हनूमान्जी बडे कष्टसे उठ जिन रामजीका ध्यान मन में कर तपस्या करने हिमालयको गए उन रामजीको शिरसे प्रणामहै ॥७९॥ बडे कष्टसे कहनेका प्रयोजन यहहै कि यद्यपि वास्तव में रामजी हनूमानजी भिन्न नहीं तथापि देहभाव से हनूमान्जी रामजीको प्रभु और अपनेको रामजीका दास मानते हैं इसलिये स्वामी के चरणकमलों के वियोग होने में साधारणको भी खेद होता है ऐसेपरमभक्तको क्यों न हो।

त्वमपिऋक्षपते वसभूतले पुनरवाप्स्यसिमेननु दर्शनम्। इतितमापिय आदिशतिस्मतं रघुवरं शिरसाप्रणमाम्यहम् ॥ ८० ॥

अर्थ—फिर जो रामजी ने जाम्वान से कहा कि हे ऋक्षपते तुमभी पृथिवी में रहो फिर मेरे दर्शनको पाओगे उनरामजी को शिरसे प्रणाम है ॥ ८० ॥

कपिवृतोऽपिचपौरजनैर्युतो धनपते रूपविश्य सु

पुष्पके । स्वरभिगम्ययआशुचतुर्भुजः समभवत्प्रण मामितमीश्वरम् ॥ ८१ ॥

तदनन्तर जो रामजी वानर और नगरजनोंको साथले पुष्पक विमान में वैठ स्वर्ग में जा शीघ्रही चतुर्भुज हो विराजमान हुए उन विष्णु रूप रामजी को शिरसे प्रणाम है ॥ ८१ ॥

अहितकण्टक नाशनमोदितैः सुरवरैः स्तुति वं-दन तत्परैः । नयनवारिभवैः परिपूजितं समभिनौ-मिहिराम महम्मुदा ॥ ८२ ॥

अर्थ—शत्रु भूत रावणादि राक्षसोंके नाशहोनेके कारण प्रसन्न हुए और प्रणाम स्तुति करनेमें तत्पर देवताओंके नेत्र कमलों से पूजेगये अर्थात् प्रसन्नतापूर्वक देखेगए उन श्रीरामजी को शिर से प्रणाम है ॥ ८२ ॥

परमितोऽखिलदेवगणाः सुखं विहरता ध्वरभा-ग मवाप्नुत । य इतितानवदद्विससर्जच तमभि नौमिहि राम महम्मुदा ॥ ८३ ॥

अर्थ—फिर जिन रामजी ने भो देवगणो अव सुखपूर्वक वि-हार करो और यज्ञोंके भागों को पाओ ऐसा कह उनको विदा किया उन रामजी को प्रसन्नता पूर्वक हम प्रणाम करते हैं ॥ ८३ ॥

तदनुदेवगणाहियदाज्ञया प्रमुदिताययुरात्मवरा लयान् । अपियआत्मपुरं सरमोययौ रघुवरं शिरसा प्रणमामितम् ॥ ८४ ॥

अर्थ—इसके पीछे जिन रामजी की आज्ञा से सम्पूर्ण देव प्रसन्न हो अपने २ उत्तम २ मन्दिरों में गए और जो आपभी ल-क्ष्मीजी सहित अपने पुरको सिधारे उन रामजी को शिरसे प्र-णाम है ॥ ८४ ॥

विभुमतीहमचिन्त्यमजं प्रभुं परमयोगिमहेश्वर मव्ययम् । अनघमेकमनादिमगोचरं रघुवरं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ८५ ॥

अर्थ—व्यापक और इच्छा रहित और कामादि संसक्त चित्त वालों से जिनका चिन्तवन नहीं होसक्ता और जन्मादि रहित सर्व शक्तिमान् और परमयोगि जो श्री शंकर हनूमदादि हैं वेभी जिनको प्रतिक्षण एकाग्र मनसे ध्यान करतेहैं इस कारण परमयोगि महेश्वर और विकार रहित और निष्पाप और केवलस्वरूप और अनादि अगोचर ऐसे जो श्रीरामजी हैं उनको शिरसे प्रणामहै॥८५॥

यदनुकीर्त्तनपूजन वन्दनस्मरणलीनजनोभवसागरम् । तरतिनोपरि पश्यतितम्पुनस्तमभिनौमिहि राममहम्मुदा ॥ ८६ ॥

अर्थ—निर्गुणरूपका वर्णन कर अबसगुणका वर्णन करतेहैं जिन रामजीके कीर्त्तन पूजन प्रणाम करने में तत्पर जन संसार रूप समुद्रको तर फिर उसे नहीं देखता है उन श्रीरामजीको हम प्रसन्नता से प्रणाम करते है ॥ ८६ ॥

हृदयपद्मविराजितमन्वहं परमबोधमयं परतः परम् । अचलभक्ति समीप निवासिनं समभिनौमि हिराममहम्मुदा ॥ ८७ ॥

अर्थ—नित्य हृदय कमलमें विराजमान ज्योतिः स्वरूप सर्वज्ञ मनोबुध्यादि परसे पर और दृढ भक्ति के समीप निवासी भक्ति करके लभ्य ऐसे श्रीरामजीको हम प्रसन्नतापूर्वक प्रणाम करतेहैं ८७॥

यदपियःकथितः समदर्शकस्तदपिभक्तजनेषुविशे

षदृक्॥ भवतिराममहम्प्रणमामितं मधुरमूर्ति मुमेश सखंसदा ॥ ८८ ॥

अर्थ—यद्यपि जो रामजी समदृष्टि कहेजाते हैं तौ भी भक्त जनों के विषय विशेषकृपादृष्टि करैंहैं और श्रीशिवजीके परमस्नेही सदा मनोहर मूर्त्तिमान् ऐसे रामजीको शिरसे प्रणाम है ॥८८॥

सृजतिवर्द्धयाति त्रिगुणात्मिका हरतियद्गृहिणी भुवनत्रयम् । तमविकारिण मार्त्तमहाश्रयं समभि नौमिहि राममहम्मुदा ॥ ८९ ॥

अर्थ—सत्वरजस्तमोमयी जिनकी गृहिणी अर्थात् माया जगतकी सृष्टि पालन संहार करतीहै विकार रहित दीनजनोंके परम आश्रय ऐसे उन रामजीको शिर से प्रणाम है ॥ ८९ ॥

अथ कृष्णावतारवर्णनम् ।

सुखनिधिं व्रजरास विलासिनं रविसुता जलवीचिविहारिणम् । धृत मयूर सुपिच्छ किरीटकंसमभि नौमिहिराममहम्मुदा ॥ ९० ॥

अर्थ—सुख के निधि व्रज में रासलीला करनेवाले यमुनाजी के जल कल्लोलों के बीच विहार करनेवाले सुन्दर मोर मुकुट धारण करनेवाले ऐसे रामजी को प्रसन्नता पूर्वक हम शिरसे प्रणाम करते हैं ॥ ९० ॥

बलिदयालुवरंस्वकनिष्ठिका धृतगिरिं विहितेंद्र समाननम् ॥ अखिलगोकुलपालनकारकं समभिनौमिहिराममहम्मुदा ॥ ९१ ॥

अर्थ—बलवान् और दयावानों में श्रेष्ठ और कनिष्ठ अंगुली

से जिन्होंने गोवर्द्धनाचल को धारण किया और उसी समय इन्द्र का गर्व मर्दन जिन्होंने किया और सारे गोकुलको पालनेवाले श्री रामजीको प्रसन्नता पूर्वक प्रणाम है ॥ ९१ ॥

यदधरामृतपानपरायणा मुरलिकाप्रबभूवचराधिका । विविधकेलिपटुं वनमालिनं तमभिनौमिहिराममहम्मुदा ॥ ९२ ॥

अर्थ—जिनके अधरामृतका पानकरने वाली मुरली और राधकाजी हुई और नाना प्रकारकी क्रीड़ा करनेमें निपुण और पत्र पुष्प मयी सुन्दर वन मालासे सुशाभित हुए उन रामजी को हम प्रसन्नता पूर्वक प्रणाम करतेहैं ॥ ९२ ॥

निहतकंसमुखासुरबृन्दकं मधुपुरीसुखवृद्धिविधायकम् । सुरमहीसुर भक्तजनप्रियं समभिनौमिहिराममहम्मुदा ॥ ९३ ॥

अर्थ—कंस आदि दैत्य समूहोंके संहारक और मथुरा पुरीके आनन्द दायक देवता ब्राह्मण और भक्त जनोंके ऊपर प्रेम करने वाले श्री रामजीको प्रसन्नता पूर्वक हम प्रणाम करतेहैं ॥ ९३ ॥

सपदिरुक्मिणिकासुमनोऽभिला षफलदं शिशुपालमहारिपुम् । प्रणतदीनजनार्त्तिनिवारकं समभिनौमिहिराममहम्मुदा ॥ ९४ ॥

अर्थ—शीघ्रही रुक्मिणी जीके मनोरथके पूर्ण करनेवाले और शिशुपालके संहार करने वाले शरणागत दीन जनोंकी विपत्तिके हरने वाले रामजीको हम प्रसन्नता पूर्वक प्रणामकरतेहैं ९४

द्विजसुदामसुतण्डुल भक्षकं त्रिभुवनैकपतिं कम

लाप्रियम् । विभवदं भवभीतिनिवारकं पटुतरं ननु राममहम्भजे ॥ ९५ ॥

अर्थ—सुदामा नामक ब्राह्मण के तण्डुलोंके खाने वाले और तीन लोकोंके चक्र वर्त्ती और लक्ष्मी जीके पति और सकल सम्पत्तिके देने वाले संसार के भयको दूर करने वाले अति चतुर ऐसे श्री रामजीको हम भजतेहैं ॥ ९५ ॥ पटुतर कहने से यह प्रयोजनहै कि–विप्र पत्नीकी इच्छा सम्पत्तिकीथी और सुदामाजी उसको अनित्य और सांसारिक कार्योंमें लिप्त कराय भक्तिमें विघ्न कराने हारी समझतेथे और केवल राम चरणों में प्रीति चाहेंथे अतः भगवान् जीने उनका आदर सन्मान मात्र किया अर्थात् तुमको मायामें हम लिप्त नहीं करते यह भावगुप्त रीतिसे जनाया और उनकी पत्नीकी अभिलाषा जोथी वहपूर्ण की क्योंकि वह अबला होनेसे दारिद्र दुःखसे व्याकुल हो राम जीकी शरणमें सत्य मनसे प्राप्त हुई

द्रुपदराजसुता पटवर्द्धकं सुमति पाण्डव घोर विपद्धरम् । कुमति कौरव दर्प दवानलं समभि नौमिहि राम महम्मुदा ॥ ९६ ॥

अर्थ—द्रौपदीजीके वस्त्रोंकी वृद्धिकर दुःशाशन करके वस्त्राकर्षण करते समय लाज रखनेवाले सुबुद्धि अर्थात् हरिभक्ति पाण्डवों की घोर विपत्तिको हरनेवाले दुर्बुद्धि अभिमानी अर्थात् रामभक्ति विमुख कौरव रूप वनको नाश करने को वन अग्नि के समान बड़े प्रतापी श्री रामजी को हम प्रसन्नता पूर्वक प्रणाम करतेहैं९६

परम कारुणिकं मधुरा कृतिं जगद् नित्यमिदं कृत निश्चयम् । इतिहि वुद्धमलौकिक वुद्धिकं समभि नौमिहि राम महम्मुदा ॥ ९७ ॥

अर्थ—अतिदयालु और सौम्य आकार वाले यह जगत् अनित्य है करके निश्चय करदेने वाले अद्भुत बुद्धिमान् बुद्ध इस नाम करके प्रख्यात श्री रामजी को हम प्रसन्नतासे प्रणाम करतेहैं९७

सुतुरगोन्मुखमीश मनामयं सुकृति हृत्कमलोदर वासिनम् । सकल कालिक पाप भयापहं समभि नौमिहि राम महम्मुदा ॥ ९८ ॥

अर्थ—सुन्दर घोडा जिन के सामने है ईश्वर निरामय पुण्यात्माओं के हृदय कमलमें विराजमान समस्त कलिकालके पाप भयोंके नाश करनेवाले श्री रामजीको हमशिरसे प्रणाम करते हैं९८

इति दशावतार वर्णन संक्षेपतः ॥

यमनुचिन्त्य मनः परिमोदते ऽपिचसमुत्थित रोमततिस्ततुः । भवति नेत्रयुगं सजलं परं तमभिनौमिहि राम महम्मुदा ॥ ९९ ॥

अर्थ—जिन रामजीका स्मरणकर मन अति आनंदित होजाता है और शरीर में रोमावलि उत्थित होती है और नेत्र हर्ष जलसे पूर्ण होतेहैं उनश्रीरामजीको हम प्रमुदितहो प्रणामकरते हैं ९९

अति पवित्रमतीव मनोहरं जगति यस्य सुनाम विराजते । विविध मङ्गलदं कलुषापहं तमभि नौमिहि राम महम्मुदा ॥ १०० ॥

अर्थ—अति पवित्र और अति प्रिय लगनेवाला और नाना मंगल दायक सकल पापों का लोप करने वाला जिनका नाम जगत्में विराजता है उन रामजी को शिरसे प्रणाम है ॥ १०० ॥

जानक्यासह सुविराजमानराम चन्द्रस्या नु-

पम गुणाभिचोदतेन । तत्प्रीत्यै शतकमिदं शुभंहि मोतीरामेण प्रविरचितं सतां मुदेच ॥ १०१ ॥

अर्थ—श्री सीता सहित विराजमान श्री रामजी के गुणों से प्रेरित बुद्धि ऐसे मोतीराम त्रिपाठी ने यह शुभराम शतक उन श्री सीतारामजी की प्रसन्नता के निमित्त और सज्जनों के मन की प्रसन्नताके निमित्त रचा है॥१०१॥क्योंकि वाल्मीकि अध्यात्म तुलसी कृतादि परमोत्तम ग्रन्थों का सारांस इस में है और श्री रामजी के दशावतारों के संक्षेप वर्णन पूर्वक श्री रामजी को सौ वार प्रणाम भी हैं और अनेकानेक कार्योंमें संसक्त जनोंको उन ग्रंथों का पूर्ण अन्वेषण करना कठिनसा होताहै और यह रामशतक उन जनों को रामचरित्र का स्मरण शीघ्रही करासक्ताहै अतः (सतां मुदेच यह पद दिया है भावयह है कियद्यपि कविता लघु है तथापि सर्व लोकाधिपति श्रीरामजीकेनाम मात्रसे सज्जनोंको प्रमुदित कर गौरव को पाय रचयिता को कृतार्थ करैगी ॥

जगन्नाथ रामप्रभोदीनवन्धो समस्तापराधान्ममस्वल्पवुद्धेः । क्षमस्वावनेर्नन्दिनी प्राणनाथ प्रसीद प्रसीद प्रसीद प्रसीद ॥ १०२ ॥

अर्थ—भो जगत्पते!भो प्रभो!भोदीनवन्धो!भो रामचन्द्र!मुझ मन्द मती के सम्पूर्ण अपराधों को क्षमा करो और भो जानकी! प्राणवल्लभ मेरे ऊपर सदैव प्रसन्न रहो ॥ १०२ ॥

पद ।

अवधपुरी में प्रकटहुए सुर विप्र धेनु हितकारी राम ।
लीला करीं अनन्त हरन महिभार देह नरधारी राम ॥
पूरन यज्ञकिया मुनिवर का प्रथम ताडका मारी राम ।
चरणकमलकी छुआके रज पुनि गौतमनारि उधारीराम ॥
भूप स्वयंवर गये विलोकन मुनि लक्ष्मण वलकारी राम ।
दिखा जनकपुर वासिनको निजरूप मोहनी डारी राम ॥
धनुष तोड भूपति प्रणराखा व्याहीं जनकदुलारी राम ॥ली०॥१॥

मात पिताके वचन चले फिर कर वनकी तैयारी राम ।
सहित लषन सिय उतर सुरसरीचले भक्तभयहारी राम ॥
मुनिपद पूजत चले जात वन जानिभीर सुर भारी राम ।
पंचवटी के समीप पहुँचे सिय लक्ष्मण सुखकारी राम ॥
किसविध निशिचर नाश करूं यहमनमें बातविचारी राम ॥ली०॥२॥
सूर्पनखाकी काटि नासिका लक्ष्मणमति अनुसारी राम ।
खरदूषण त्रिसरा संहारेउ सुररक्षक असुरारी राम ॥
सीता हरन हुआ मारा कञ्चनमृग मायाकारी राम ।
आगे चलकर मिलो जटाई तिसकीगती सुधारी राम ॥
ताहिदियो निजधाम कृपानिधि करुणाभवन खरारीराम ॥ली०॥३॥
किष्कन्धाके निकट जाय सुग्रीवकि विपत विडारी राम ।
वालीवध कपिराज वनायो दीनमीन चित वारी राम ॥
जला लंक सीता सुधलाये हनुमत अज्ञा कारी राम ।
हृदय लगाय कुशल पूंछीभये मनम परम सुखारी राम ॥
शरण विभीषण आयो प्रभुअपनायो भक्ति पियारी राम॥ली०॥४॥
बँधा सेतु सागर का उतरे थापेउ तहँ त्रिपुरारी राम ।
निजमुखकहा न शिवविनु प्राणी पावहि भक्तिहमारीराम ॥
लगीलषण तन शक्ति विकल भयेभ्राता दसानिहारीराम ।
हनूमान लाये सरजीवन उठे लषण वृत धारी राम ॥
सगुणरूपधरिकियेचरितअविगत अमानअविकारीराम ॥ली०॥५॥
कुम्भकरण घननाद आदि दशमुख सव सैन सँहारीराम ।
बजा दुन्दभी जयधुनकर देवन अस्तुति उच्चारी राम ॥
चढ़ पुष्पक चले अवध संगलेलषण सिया सुकुमारी राम ।
सप्तकान्ड का सार सुनायो भज श्रीअवध विहारी राम ॥
सिय सौमित्र समेत वसो श्यामा के हृदय धनुधारी राम ।
लीला करीं अनन्त हरण महिभार देहनर धारी राम ॥ ६ ॥

इति शुभम्.